लैंगिक न्याय के रास्ते पर ...

विकास नारायण राय

दिल्ली विश्वविद्यालय के अम्बेडकर कालेज की कर्मचारी द्वारा उत्पीड़न के साए में आत्महत्या, महिला सशक्तीकरण को मात्र यौनिक सुरक्षा के चश्मे से देखने के प्रति गम्भीर चेतावनी है। सभी मानेंगे कि देश की राजधानी के एक बड़े शिक्षा संस्थान के इस प्रचारित प्रकरण को 4 वर्ष तक खिंचने की जरूरत नहीं थी, और इसका अंत लैंगिक न्याय में होना चाहिए था न कि आत्महत्या में। काश, कानून का फोकस, 'कार्यस्थल पर यौनिक उत्पीड़न से सुरक्षा' तक सीमित रहने के बजाय 'कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न से सुरक्षा' तक विस्तृत होता। जहरीली हो चुकी पत्तियों/टहनियों को काटने के उतावले संतोष में क्या हमने जहरीली जड़ों के उन्मूलन से आँख नहीं मूंद रखी है?

लैंगिक न्याय के कठिन रास्ते को प्राय: सामजिक व्यवहार के दो शतुर्मुर्गी स्तरों पर देखा जा सकता है। एक, यह तर्क देनेवालों की कमी नहीं है कि महिला कानूनों का व्यापक दुरुपयोग हो रहा है, और दूसरा, आम दावा होता है कि मर्द अपनी स्त्रियों के साथ जो भी कर रहे हैं उनके भले के लिए ही तो। दोनों में बस ऊपर-ऊपर से सचाई की झलक रहती है और अंदरखाने पूरा पाखण्ड भरा होता है। महिला कानून, अधूरे-अधकचरे-अप्रभावी नियमों का पुलिंदा हैं जो उत्पीड़ित को उलझाते हैं, राहत नहीं देते। लिहाजा यदि समस्या है घरेलू हिंसा तो भी पीड़ित को गुहार लगानी पड़ती है दहेज उत्पीड़न की और पुरुष वर्चस्व की तो पूर्व-शर्त ही है, स्त्री का पारिवारिक-आर्थिक-सामाजिक-राजनीतिक रूप से कमजोर प्रोफाइल। इस समीकरण के दायरे में मर्द कुछ भी उपाय कर लें, स्त्री असुरक्षित ही रहेगी।

यदि बलात्कार या कामुकता/लम्पटता से भरे तमाम तरह के महिला उत्पीड़न मात्र यौन अपराध होते तो इन्हें नियंत्रित कर पाना कठिन नहीं था। समूची कानून व्यवस्था व न्याय व्यवस्था के साथ-साथ सारा समाज भी कामुक और लम्पट वहशियों के प्रतिकार में एकजुट हो ही जाता है। लिहाजा कामकाजी स्त्रियों को ही नहीं तमाम स्त्रियों/बच्चियों को इस हौव्वे से कब की राहत मिल चुकी होती। पर बलात्कार सहित यौन उत्पीड़न के विभिन्न अपराध, जो पहली नजर में महज कामुक/लम्पट कृत्य लगते हैं, मुख्यत: पुरुष वर्चस्व से संचालित, लैंगिक अपराध भी हैं। स्त्री की लैंगिक असमानता इनकी उत्प्रेरक है तो उसकी लैंगिक विवशताएँ इनकी उर्वरक जमीन। बिना लिंग संवेदी वातावरण बनाये और लैंगिक न्याय की मंजिलें तय किये इन अपराधों को मिटा पाना तो दूर, कम भी नहीं किया जा सकता।

पुरुष वर्चस्व द्वारा स्त्री पर लादी गयी 'इज्जत' की अवधारणा का उसके उत्पीड़नों/बलात्कारों, उसकी हत्याओं/आत्महत्याओं से सीधा सम्बन्ध होता है। परिवार में उसे सम्पत्ति और बाजार में भोग्या की हैसियत दी जाती है। सनातन सत्य है कि कमजोर वर्ग पर कैसी भी जवाबदेही लादी जा सकती है। ख़ास तौर पर, कमजोर स्त्री पर, सामाजिक नैतिकता को ढोने की। शरद यादव जैसे तर्कशील व्यक्ति ने हाल में जबलपुर में कहा कि बेटी की इज्जत जाने से परिवार व मोहल्ले की इज्जत चली जाती है। इसी बोझ से दबी, हरियाणा में रोहतक के घरणावती गाँव में, गोत्र विवाह करने वाली लड़की कुनबे द्वारा कपट से मार दी गयी कि वह परिवार, गाँव, समाज, खाप की 'इज्जत' ले बैठी थी। अंतत: यह उसके कमजोर होने की ही सजा थी।

घरणावती जैसे समाजों में युवकों द्वारा बलात्कार भी किये जाते हैं, विशेषकर कमजोर वर्ग की स्त्रियों के साथ। ऐसा नहीं है कि वहां लोग इसे अनैतिक नहीं मानते पर बलात्कारी को जान से नही मारा जाता। उल्टे उसे कानूनी मदद की सुविधा और पुनर्वास का अवसर दिया जाता है। यह माना ही नही जाता कि पुरुष के ऐसे व्यक्तिगत कुकर्म सारे समाज को भी कलंकित करते हैं। शरद यादव ने भी हमलावर मर्द के परिवार/मोहल्ले की इज्जत जाने की बात नहीं की। मजबूत मर्द पर परिवार-मोहल्ले-समाज-खाप की नैतिक जवाबदेही लादी भी कैसे जा सकती है!

युद्धों की तरह, सांप्रदायिक/जातीय किस्म के दंगों में भी दूसरे समुदाय को नीचा दिखाने या उजाड़ने के लिए बलात्कार एक समाज-स्वीकृत लैंगिक हथियार के रूप में इस्तेमाल होता आया है7 2002 के गुजरात दंगों में अहमदाबाद का नरोदा पाटिया इसका जीता जागता उदाहरण बना। हालिया मुजफ्फरनगर के दंगों के दौरान भी, वहां के फुगाना गाँव में यही हुआ। ऐसे में बलात्कारी अपने समुदाय का हीरो बन जाता है और पीड़ित अपने समुदाय की इज्जत गंवाने का माध्यम। यहाँ कामुकता/लम्पटता नहीं, लैंगिक सोच हावी रहती है। यहाँ तक कि खालिस यौनिक धरातल पर, बलात्कार जैसी शारीरिक बर्बरता के विरुद्ध जो व्यापक सामजिक आक्रोश फूटता है उसमें भी समझ रहती है कि यह एक लैंगिक सेंधमारी है। आखिर, लैंगिक धरातल पर स्त्री का यौन किसी न किसी पुरुष की अमानत ही तो माना जाता है!

यौनाचार को सामाजिक/न्यायिक/सत्ता संस्थानों द्वारा 'इज्जत' के प्रिज्म से देखने का यही आधार है। इसी सोच का असर है कि स्व-विवेक से वर-चयन करनेवाली बेटी को नतमस्तक करने के लिए उसका कुनबा, यहाँ तक कि तथाकथित महिला कानून भी, उसके पुरुष साथी को दुराचारी घोषित कर देते हैं। अम्बेडकर कालेज की उत्पीड़ित कर्मचारी को भी लगातार लैंगिक कठघरे में खड़ा रखा गया; उसे चार वर्षों से झूठा ही सिद्ध किया जा रहा था। दरअसल यौनिक चश्मे से बने सुरक्षा-कानूनों से, स्त्री, मर्द के लैंगिक हथियारों का सामना कर ही नहीं सकती। इन कानूनों की बनावट उसके संभावित प्रतिरोध को भोंथरा ही करती है।

तभी, घरणावती हत्या-काण्ड को सामाजिक जीवन मूल्यों, गोत्र परम्परा के उल्लंघन, का मुद्दा बनानेवाले इलाके के चौधरियों से लेकर सूबे के मुख्यमंत्री तक की चिंता के ग्राफ से लैंगिक न्याय या समाज का संवेदीकरण नदारद रहता है। उनके लिए प्रमुख सवाल है - क्या समान गोत्र में, यानी, उनके अनुसार, भाई-बहन की शादी हो जाने दें? दिसंबर 2012 के दिल्ली बलात्कार काण्ड पर चला विमर्श भी प्रमुखत: कानून व्यस्था के सन्दर्भ में ही सीमित रहा। हर ओर से एक जैसे स्वर गूंजे - पुलिस ज्यादा कारगर बने और दंड ज्यादा कड़े हों। दोनों वीभत्सतम अपराधों में पुरुष वर्चस्व के लैंगिक आयामों की भूमिका को अनदेखा करना इसीलिये संभव और स्वाभाविक हो सका है क्योंकि स्त्री कमजोर है। सीधा समीकरण है कि पुरुष वर्चस्व को तोड़े बिना स्त्री को दैनिक हिंसा से मुक्ति नहीं मिलने जा रही। स्त्री विरुद्ध हिंसा की रोकथाम के दिखावटी-बनावटी-मिलावटी-सजावटी उपायों को तो छोड़ ही दीजिये, यहाँ तक कि अच्छी से अच्छी कानून व्यवस्था और कड़ी से कड़ी अपराध-न्याय व्यवस्था भी स्त्री-विरुद्ध हिंसा के घर-घर में पसरे ताने-बाने पर रोकथाम नहीं लगा पाती है। इन्हें समय-समय पर सुदृढ़ किये जाने के बावजूद नतीजा यही निकलता है कि स्त्री को कमजोर रख कर उसकी सुरक्षा के उपाय कारगर नहीं हो सकते। ऐसी स्त्री पहल, ऐसे लैंगिक कानून और ऐसे सामाजिक मंच चाहिए जो महिला सशक्तीकरण में ही इस सार्वभौम समस्या का हल देखें।

स्त्री वर्ग को मजबूत होना है क्योंकि स्त्री-विरुद्ध हिंसा की मुहिम महिलाओं की सजग/सबल भागीदारी की मुहताज है। मामला उन्हें कृत्रिम सुरक्षा पहुँचाने का इतना नहीं है; बुनियादी मुद्दा बनता है कि महिला सशक्तीकरण का कारगर रास्ता क्या है? लैंगिक न्याय संहिता (जेंडर जस्टिस कोड) और लिंग संवेदी समाज इस रास्ते की महत्वपूर्ण मंजिलें होनी चाहिए पर राज्य-तंत्र के रडार से दोनों ही नदारद रहे हैं7 इन मंजिलों को पाने में नागरिक समाज स्वयं कोई बड़ी पहल करने में असमर्थ सिद्ध हुए हैं। मीडिया के लिए भी ये आयाम गौड़ रहे हैं, और, अकेले, स्त्री इस दिशा में ज्यादा आगे नहीं जा पायी है।

एक स्त्री के लिए उसके सशक्तिकरण का मतलब क्या है? रोजमर्रा की लैंगिक-यौनिक हिंसा के हौव्वे से मुक्ति; पुरुषों जैसे बराबरी के दायित्व एवं बराबरी के अधिकार; आत्म-सम्मान, आत्म-निर्णय, आत्म-विश्वास और आत्म-विवेक से संचालित पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन! निश्चित रूप से, स्त्री, परिवार से बाहर नयी से नयी श्रमवाली एवं दिमागी भूमिकाएं निभाने को आतुर है। उसे शिक्षा, शादी, कैरियर जैसे व्यक्तिगत निर्णयों में तो स्वतंत्रता चाहिए ही, वह परिवार एवं समाज की निर्णय प्रक्रिया में भी समान भागीदारी चाहेगी। उसकी पारिवारिक सम्पत्तियों एवं प्रतिभूतियों में बराबर की हिस्सेदारी होनी चाहिए। जरूरी होगा कि राजनीति समेत तमाम सत्ता सम्बन्धों में उसका दखल हो। उसे, महिला-छवि को लेकर, हर तरह के अपमानजनक एवं उत्पीड़क स्टीरिओ टाइप से मुक्ति पानी है। वह चाहेगी कि उसकी क्षमता को उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व के आधार पर जाना/आँका जाय न कि उसके लिंग से।

इन रास्तों में जो रुकावटें हैं स्त्री उनसे भी वाकिफ है। नियमित उत्पीड़न, बलात्कार, हत्याएं, आत्महत्याएं उसके संसार से अचानक छूमंतर नहीं होंगे। स्त्री पर लदा 'इज्जत' का लैंगिक बोझा अपने आप नहीं जाएगा। कानून भी सजा देने में चुस्ती वहीं तक दिखाता है जहाँ तक आरोप खालिस यौन हिंसा का हो। अन्यथा लैंगिक हिंसा के अधिकांश मामलों में तो सजा का प्रावधान ही नहीं है, और जहां है भी वहां सालों-साल बाद भी सजा दुर्लभ है। घरेलू हिंसा के कानून दूर भविष्य में हर्जाने का वादा देंगे, रीयल टाइम में राहत नहीं। लड़की को शोषक लैंगिक सांचे में ढालनेवाले पैत्रक कुनबे की कोई जवाबदेही नहीं होती। मीडिया में कभी यह हेडलाइन देखने को नहीं मिलेगी कि सारे गाँव या मोहल्ले में एक भी लड़की को पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा नहीं मिला है। पिता/भाई बेशक यौनिक दुर्व्यवहार के प्रतिकार में अपनी जान भी दे दें पर बेटी/बहन को उसके हक की एक इंच जमीन नहीं देना चाहेंगे।

देश में 30 प्रतिशत लोग शाब्दिक निरक्षर हैं और इसलिए साक्षरता मिशन और सर्व शिक्षा अभियान भी हैं। इसी देश में 99 प्रतिशत पुरुष-स्त्री लैंगिक निरक्षर हैं पर इस मोर्चे पर राज्य का न कोई मिशन है न अभियान है7 स्त्री विरोधी हिंसा की व्यापकता को देखते हुए क्या यह राज्य की जिम्मेदारी नहीं होनी चाहिए कि उसके नागरिक इस मामले में संवैधानिक दृष्टि से संम्पन्न हों? राष्ट्रीय स्तर पर एक लैंगिक मिशन के तहत, शैक्षिक/नागरिक/सरकारी/गैर-सरकारी इकाइयों में लिंग-संवेदी मंच अनिवार्य हों?

आज लैंगिक मोर्चे पर स्त्री-पहल की अपनी विकट सीमाएं हैं; दिल्ली जैसे बस-बलात्कार काण्ड, हरियाणा जैसे घरणावती हत्याकाण्ड या अम्बेडकर कालेज जैसी आत्महत्याएं अनवरत क्रम का हिस्सा हैं। पर इनसे स्त्री की पहल थमने वाली नहीं, हालांकि, इसे शक्ति दे सकने वाले लैंगिक कानूनों तथा इसे व्यापक कर सकनेवाले लैंगिक मंचों का गहरा अभाव है। महिला सशक्तीकरण के ये तीनों जरूरी आयाम, स्त्री पहल, लैंगिक कानून, संवेदी मंच, जो अस्त-व्यस्त नजर आते हैं, इस मोर्चे की प्राथमिकता होने चाहिये।

माली पर साम्राज्यवादी हमला

माली का उत्तरी भाग जो 6.4 लाख वर्ग किलोमीटर का विशाल रेगिस्तानी भाग है अभी भी विपुल प्राकृतिक संपदाओं से भरा है। यहां सोने और यूरेनियम के भण्डार हैं तथा खनिज हाईड्रोकार्बन भी भरपूर मात्रा में है। माली पर फ्रांसीसी हमले का असली मकसद इन्हीं प्राकृतिक संसाधनों को लूटना है। पश्चिमी अफ्रीका में चीन की मौजूदगी से भी फ्रांस काफ़ी परेशान है।

अफ्रीकी महाद्वीप के एक छोटे से देश माली को लोकतंत्र का पाठ पढ़ाने के बाहाने फ्रांस ने वहां बमवर्षक विमानों और टैंकों से हमला कर दिया। इस काम में उसे साम्राज्यवादी सरगना अमरीका और नाटो का पूरा सहयोग मिला। साम्रज्यवादी गिरोह इससे पहले भी ईराक, अफगानिस्तान, लीबिया, सीरिया, ट्यूनीशिया आदि कई देशों में लोकतंत्र का पाठ पढ़ा चुके हैं। इन देशों में जनता का कत्ले आम कर 'जनता की सरकारें' भी कायम की जा चुकी हैं।

माली पहले फ्रांस का उपनिवेश था। उपनिवेशवाद से मुक्ति के इतने सालों बाद अब फ्रांस चाहता है कि वहां 'लोकतंत्र' कायम हो, फ्रांस अमरीका और नाटो के देश चाहते हैं कि माली में आतंकवाद न हो। अमरीकी रक्षा सचिव लियोन पनेटा ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि उनका देश ''इस बात के लिए प्रतिबद्ध है कि अलकायदा को छुपने के लिए कोई जगह न मिले।'' याद रहे कि इसी अलकायदा से बातचीत के लिए अमेरिका ने इसे एक खाड़ी देश में अपना दफ्तर खोलने व उस पर झण्डा लगाने की इजाजत दी थी। माली पर हमले से पहले फ्रांसीसी रक्षामंत्री जेन-वेस्ली दी-ड्रिआन का कहना था कि ''राष्ट्रपति (फ्रांसीसी) इस बात के लिये प्रतिबद्ध हैं कि हमें उन आतंकवादियों को जड़ से खत्म कर देना चाहिए जो माली ही नहीं, बल्कि खुद हमारे देश और यूरोप के लिए भी खतरा हैं।''

फ्रांस और उसके सहयोगी माली में आतंकवाद का बवंडर मचा कर उसका उद्धार करना चाहते हैं, जबकि अफ्रीकी मामलों के जानकारों का कहना है कि माली में इस्लामी कट्टरपंथी भविष्य में लंबे समय तक कोई खतरा बनने वाले नहीं हैं। देश के दक्षिण भाग में कट्टरपंथी और उनके तुर्क सहयोगियों को बहुत ही कम समर्थन प्राप्त है, जबकि माली की 90 फीसदी आबादी वहां रहती है। जिस उत्तरी हिस्से में उनका प्रभाव है, वह विरल जनसंख्या वाला भीषण रेगिस्तानी भाग है। लेकिन माली का पुराना मालिक फ्रांस उसके लिये जरूरत से ज़्यादा ही चिंतित है। फ्रांस के रक्षा मंत्री का कहना है कि ''फ्रांस ने माली पर इसलिए हमला किया कि माली इस्लामपंथियों और उनके सहयोगी अलकायदा के हाथों में न चला जाये।'' अफ्रीकी देशों की आंतरिक सुरक्षा को लेकर फ्रांस की बेचैनी का ही प्रमाण है कि उसने अफ्रीकी देशों में 5,000 पैरा मिलिट्री सैनिक तैनात किये हें जिनके दम पर वह अपनी कठपुतली सरकारों का बचाव करता है और अपने विरोधियों को सत्ता में आने से रोकता है। लीबिया पर नाटो के हमले और गद्दाफी की शहादत के बाद माली में निश्चय ही इस्लाम पंथियों का प्रभाव बढ़ा है। गद्दाफी की छवि अखिल अफ्रीकी नेता की रही है, माली की तुर्क आबादी उनके प्रति गहरी हमदर्दी रखती थी। वे लोग गद्दाफी के पक्ष में नाटो के ख़िलाफ़ लड़े भी थे। इस लड़ाई में इस्लामपंथियों ने भी उनका साथ दिया। मुस्लिम बहुल देश माली में तुर्कों की स्थिति बहुत अच्छी नहीं रही है। वहां की आबादी में मूल अफ्रीकी लोगों का बहुमत है तथा तुर्कों और अरबों की संख्या बहुत कम है। तुर्कों के साथ लंबे समय से हो रहे भेदभाव ने भी उन्हें माली की सरकार के ख़िलाफ़ विद्रोह के लिये उकसाया है।

माली का संकट उस समय और ज़्यादा गहरा गया जब अमरीका में प्रशिक्षित सैनिक अफ़सर कैप्टन अमादो सानागाओ ने माली की चुनी हुई लोकतांत्रिक सरकार का सैनिक तख्ता पलट किया। सैनिक शासन ने सरकार पर आरोप लगाया था कि वह तुर्कों और इस्लामपंथियों को रोकने में नाकाम रही है। सैनिक तानाशाह के गद्दी संभालते ही तुर्कों और इस्लामपंथियों पर हमले बढ़ गए जिसका प्रतिकार करते हुए उन्होंने सैनिक शासन के खिलाफ़ अपना अभियान तेज कर दिया। अमादो सानागाओ ने स्थिति को अपने हाथ से निकलता देख अपने फ्रांस को सीधी कार्यवाही का न्योता दिया। फ्रांस ऐसे ही मौके का इन्तजार कर रहा था।

माली का उत्तरी भाग जो 6.4 लाख वर्ग किलोमीटर का विशाल रेगिस्तानी भाग है अभी भी विपुल प्राकृतिक संपदाओं से भरा है। यहां सोने और यूरेनियम के भण्डार हैं तथा खनिज हाईड्रोकार्बन भी भरपूर मात्रा में है। माली पर फ्रांसीसी हमले का असली मकसद इन्हीं प्राकृतिक संसाधनों को लूटना है। पश्चिमी अफ्रीका में चीन की मौजूदगी से भी फ्रांस काफ़ी परेशान है। माली पर नया उपनिवेशवादी हमला साम्रज्यवादी देशों द्वारा आतंक के खिलाफ़ फ़र्जी युद्ध और उसके बहाने अपने लूट तंत्र को कायम रखने की रणनीति की ताजा मिसाल है।

आतंकवाद से लड़ाई इस रणनीति के लिये महज एक बहाना है। दुनिया भर में आतंकवाद के खिलाफ़ लड़ाई का प्राखण्ड करने वाले ये साम्राज्यवादी देश ही सीरिया की धर्मनिरपेक्ष सरकार के खिलाफ़ लड़ रहे एलाफीस्ट और अलकायदा से जुड़े संगठनों की मदद करते हैं।

- देश विदेश